धर्म प्रचार
(आध्यात्मिक पक्ष)
भाग – ६

नहर में पानी का बहाव सहज ही अपने वेग में बहता रहता है। परन्तु जब यह पानी पुल के नीचे दोनों ओर बने खम्बों से टकराता है तो यह भंवर (whirl pool) **में फंस जाता है।** मध्य धारा से **अलग होकर, वहीं पर घूमता रहता है।** यदि कोई तिनका इस भंवर में फंस जाए, तो वह भी **वहीं चक्कर लगाता रहता है।** यदि कोई व्यक्ति उस तिनके को पानी में से **उठा कर, सही सीध देकर, पानी की धारा की ओर मोड़ दे,** तो वह तिनका पानी के बहाव में **बहना शुरू कर देता है।**

ठीक इसी प्रकार, "जीव" अहम् के भ्रम – भुलाव या चतुराईयों द्वारा, इलाही **"हुक्म" की "जीवन – रौं" से निकल जाता है तथा मायिकी जीवन के "चक्र – व्यूह", "आवागमन" के चक्कर में फंसा रहता है।**

अकालपुरुष की शक्तिमान "जीवन रौं" या "हुक्म" से बेसुर होकर, हमारा मन कमजोर हो जाता है तथा जीव के लिए स्वयं इस मायिकी चक्र – व्यूह में से निकल पाना असम्भव हो जाता है।

इन्हि माइआ जगदीस गुसाई तुम्हरे चरन बिसारे।।
किंचत प्रीति न उपजै जन कउ जन कहा करहि बेचारे।। (पृ ८५७)

पंच बिखादी एकु गरीबा राखहु राखनहारे।। (पृ २०५)

इन पंचन मेंरो मनु जु बिगारिओ।।
पलु पलु हरि जी ते अंतरु पारिओ।। (पृ ७१०)

ऐसी अधोगति में फंसे हुए जीवों को, **मोह – माया के "चक्र – व्यूह" में से**

निकालने के लिए, गुरबाणी में, बख्शे हुए गुरमुख जनों, महापुरुषों की संगत करनी ही सबसे **सरल तथा विश्वसनीय** साधन बताया गया है –

अंचलु गहि कै साध का तरणा इहु संसारु।। (पृ. २१८)

साधसंगति निहचउ है तरणा।। (पृ. १०७१)

साधसंगति कै अंचलि लावहु बिखम नदी जाइ तरणी।। (पृ. ७०२)

हरि जन वडे वडे वड ऊचे जो सतगुर मेलि मिलाईऐ।। (पृ. ८८१)

घूमन घेरि महा अति बिखड़ी गुरमुखि नानक पारि उतारी।। (पृ. ९१६)

अकालपुरुष ने अपने कवाउ द्वारा इस संसार की रचना की तथा इसमें चौरासी लाख योनियों की **उत्पत्ति** की। इन योनियों के प्रत्येक जीव में अपनी ज्योति रख दी। यह इलाही ज्योति, गुप्त रूप में प्रत्येक जीव में ओत – प्रोत प्रवृत्त है।

इस प्रकार प्रत्येक जीव अकालपुरुष का "अंश" है। जिस प्रकार सांसारिक **"माँ"** अपने **"अंश"** – बच्चों के पालन पोषण तथा प्रफुल्लित होने का प्रबंध करती है, उसी प्रकार हमारी **आत्मिक "माँ" ईश्वर** ने भी अपने अंश – रूपी जीवों की **उत्पत्ति के साथ ही,** एक बार ही, अपने **"हुक्म"** द्वारा, उनके शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक जीवन के लिए सही, **सम्पूर्ण, त्रुटिहीन, अटल, सदैवीय प्रबंध कर दिया।**

इस इलाही **"हुक्म"** की **"चाल"** या **"रवानगी"** के नियम या मर्यादा किसी ग्रंथ में नहीं लिखे गए, न ही किसी विशेष व्यक्ति को सौंपे गए क्योंकि लिखित या व्यक्ति **नश्वर हैं** या इनमें अंकित नियम **बदल** भी सकते हैं। परन्तु इलाही **"हुक्म" तो प्रकृति के कण – कण पर लागू है** और सभी योनियों के प्रत्येक जीव के **साथ ही "अन्तर – आत्मा" में लिखा जा चुका है।**

हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि।। (पृ. १)

उदाहरणस्वरूप, प्रत्येक बीज की **अन्तर – आत्मा में जन्मजात ही "हुक्म" परिपूर्ण** (inherent and inlaid) **होता है।** इसके अनुसार ही उस बीज का जन्म, पालन – पोषण तथा फलने – फूलने और "विलीन" हो जाने का सिलसिला

चलता रहता है।

प्रकृति के सभी जीव, अकालपुरुष के 'अंश', **बच्चे होने के नाते, अकालपुरुष अपने बच्चों के जीवन का प्रबंध, किसी अन्य व्यक्ति के हाथों में कैसे छोड़ सकता है?**

मानव जीवन का **मूल तथा जरूरी उद्देश्य** (fundamental and essential purpose of life) **"इलाही माँ"** की **गोद** के "स्नेहमयी प्यार" का आनंद उठाना ही है। इस आत्मिक उद्देश्य के लिए, ईश्वर ने जीवों की अन्तर – आत्मा में, अपने इलाही **"माँ – प्यार" की चिंगारी** रख दी, ताकि जीव, इस **इलाही प्यार के आकर्षण** के द्वारा अपने **स्त्रोत** अकालपुरुष के "चुम्बकीय" **प्रेम** (magnetic love) की **ओर स्वंय ही, सहज स्वभाव, अनजाने ही खिंचता जाए।** इलाही **प्रेम – डोरी** (Divine gravity of love) से ही सारी सृष्टि –

बंधी हुई है
चल रही है
उत्पत्र हो रही है
पालन – पोषण हो रहा है
प्रफुल्लित हो रही है
जीवन का **"सार" रूप** है
जीवन की **"रवानगी"** है
"विलीन" होती है।

जत्र तत्र दिसा विसा हुइ फैलिओ अनुराग। (जाप पा. १०)

जेता कीता तेता नाउ।। (पृ. ४)

नाम के धारे सगले जंत।।....
नाम के धारे सगल आकार।। (पृ. २८४)

हुकमे धारि अधर रहावै।।
हुकमे उपजै हुकमि समावै।। (पृ. २७७)

यह **प्रेम डोरी** (Divine thread of love) प्रत्येक जीव की "अन्तर – आत्मा"

में साथ ही –

लिखी हुई है
ओत – प्रोत है
परिपूर्ण है
"जीवन – रौं" है
"जीवन – गति" है
दो तरफी है
सदैवीय है
अटल है
त्रुटिरहित है
अमिट है
अटूट है
अकथनीय है
अलिखित है
अदृश्य है
जीवन
धर्म है।

प्रतिपालै जीअन बहु भाति।।
जो जो रचिओ सु तिसहि धिआति।। (पृ. २९२)

मू लालन सिउ प्रीति बनी।। रहाउ ।।
तोरी न तूटै छोरी न छूटै ऐसी माधो खिंच तनी।। (पृ ८२७)

हरि सिमरनि धारी सभ धरना।।.....
हरि सिमरनि कीओ सगल अकारा।। (पृ. २६३)

प्रकृति की इस **"प्रेम – डोरी" के इलाही आकर्षण को "धर्म", "मज़हब" या "परमार्थ"** कहा जाता है, क्योंकि यह "प्रेम – डोरी" ही जीव को, अपने **स्त्रोत – ईश्वर की ओर अनजाने ही** (unconsciously) **आकर्षित कर रही है।**

इस प्रकार, यही इलाही **"प्रेम–डोरी", सहज ही, अनजाने ही** इन जीवों को ईश्वर की ओर, **प्रेरित करती, मार्गदर्शन करती और सहायता करती है,** तथा उनके **कल्याण का** पवित्र पावन, **त्रुटिरहित, अटल साधन** या **"धर्म" है।**

यही इलाही "प्रेम" का आकर्षण ही, उनके लिए आत्मिक "धर्म प्रचार" है।

चौरासी लाख योनियां अपने **"अन्तर्गत लिखे" "इलाही धर्म" का पालन सहज ही कर रही है** तथा स्वाभाविक ही उनकी **आत्मिक उन्नित** (evolution) **हो रही है।**

इन योनियों का, "अन्तर–आत्मा" में **प्रवाहित "जीवन–रौं" या "प्रेम–आकर्षण"** से –

सुर होना
जुड़ना
जीवन जीना
रहना–सहना
"विलीन होना"

ही इन का –

धर्म
मज़्हब
परमार्थ
पाठ
दीन
ईमान
पूजा
भजन
भक्ति
मर्यादा

रीति–रिवाज
नित्तनेम
कर्म–कांड
कल्याण है।

इन योनियों को किसी अन्य –

बाहरी
मनघड़ंत
सीखे–सिखाए
समझे–समझाए
नाम–मात्र
पृथक (भिन्न)
परिवर्तनशील
मतभेद वाले
अनेक ''वेष वाले''

धर्म की आवश्यकता नहीं तथा किसी **बाहरी दिमागी ज्ञान वाले, ''धर्म–प्रचार'' की भी आवश्यकता** नहीं। इस **''प्रेम–डोरी'' का आकर्षण ''दो–तरफी''** (two way traffic of love) है।

एक ओर, ''ईश्वर'' अपनी ''प्रेम–डोरी'' से, ''जीवों'' को अपनी **ओर आकर्षित कर रहा है।** दूसरी ओर, इस ''प्रेम–डोरी'' से आकर्षित होकर, **प्रत्युत्तर में** (in-response) जीव, **ईश्वर की ओर खिंचता जाता है।** ''जीव'' के लिए ईश्वर का **''प्रेम–आकर्षण''** ही **इलाही ''धर्म''** है तथा यह **इलाही धर्म, जीव के साथ ही धुर से लिखा आता है।** इस **''अर्न्तगत लिखे इलाही धर्म''** के लिए, किसी बाहरी **धर्म–प्रचार की आवश्यकता नहीं।**

ईश्वर ने इन योनियों को, भिन्न–भिन्न, रंग–बिरंगे आकारों व रूपों में श्रृंगारा है तथा इन्हें अलग–अलग भाषा व सोचने की शक्ति प्रदान की है। यह योनियां, न हिन्दु, न मुसलमान, न ईसाई, न मुसाई हैं, यह तो केवल अपने–अपने प्राकृतिक **''चिन्हों''** में विचरण करती है।

इन योनियों को ईश्वर ने **सीमित–बुद्धि** प्रदान की है, जिसके द्वारा वह अपना **जीवन निर्वाह करते हुए, सहज ही "हुकमि रजाई चलणा" के** इलाही उपदेश का **अनजाने ही पालन करती हुई, अपने "कर्त्ता", की ओर बहती जा रही है।**

उदाहरणस्वरुप, "फूल"–

'फूल' के बीज के अन्दर–जन्मजात ही "अर्न्तगत–लिखे हुक्म" अनुसार– पौधा पनपता है, उस पौधे के–

तने,
टहनियां,
पत्तियां,
कांटे,
फल,
फूल

तथा उसकी–

बनावट
आकार (रूप)
पंखुड़ियाँ,
रंग,
महक,
माधुर्य,
आयु आदि

भिन्न–भिन्न **प्राकृतिक गुणों के प्रकटाव के लिए, "हुक्म" बीज के अन्दर ही, गुप्त रूप में प्रविष्ट होता है।**

इस प्रकार चौरासी लाख योनियां, **"अर्न्तगत–लिखे इलाही" "हुक्म" की रवानगी के वेग में बहती हुई, अपने "कर्त्ता" के शुक्राने में, अनजाने ही अटूट सिमरन कर रही हैं।**

इस प्रकार उनका **"सिमरन", "जीवन रूप"** हो जाता है।

सिमरै धरती अरु आकासा।।
सिमरहि चन्द सूरज गुणतासा।।....
सिमरहि पसु पंखी सभि भूता।।
सिमरहि बन परबत अउधूता।।.....
सिमरहि थूल सूखम सभि जंता।।.....
गुपत प्रगट सिमरहि प्रभ मेरे सगल भवन की प्रभ धना।।....
सिमरहि जाति जोति सभि वरना।। (पृ १०७८–७९)

इन योनियों में से गुजरते हुए, जीव जब **शिरोमणि – मनुष्य योनी** में आता है, तो ईश्वर इन्सान को विशेष **बख्शिशे प्रदान करता है –**

1. **अपना स्वरुप** (own image)
2. **तीक्ष्ण बुद्धि** (profound intelligence)
3. **निर्णय शक्ति** (discriminating power)
4. **विकसित अहम्** (developed ego)

उपरोक्त विचारों का निष्कर्ष यह है कि –

आत्मिक मंडल के **"इलाही धर्म"** का **"प्रचार" सभी जीवों की अन्तर – आत्मा में ही –**

सहज स्वाभाविक (spontaneoulsy)
अनजाने (unconsciously)
सदैवीय (eternal)
सम्पूर्ण (perfect)
त्रुटिरहित (faultless)
इकसार (**अपरिवर्तित**) (changeless)

हो रहा है।

चौरासी लारव योनियां तो, इस इलाही **"धर्म–प्रचार"** का लाभ **भोलेपन में अनजाने ही उठा रही हैं।** परन्तु **मनुष्य योनि** अपनी तीक्ष्ण बुद्धि की चतुराईयों में **"उधेड़–बुन", "संशय"** द्वारा **अहम् की अन्धकारमय–काल–कोठरी में कैद हो जाता है।** इस प्रकार वह इलाही **"हुक्म" की रवानगी में से निकल कर "जीवन–रौं" से बेसुर** (out of tune) हो जाता है और **मायिकी आकर्षण के भंवर में फंस जाता है।**

मनुष्य की इस **"मनमर्जी"** तथा **विमुखता** की दशा पर **तरस करके**, ईश्वर ने हमें अपनी **ममतामयी** गोद **की ओर मोड़ने** के लिए तथा आत्मिक मंडल का ज्ञान प्रदान करने के लिए, **आदि से** ही गुरू, अवतार दुनिया में भेजे, जिन्होंने भिन्न–भिन्न धर्म चलाए तथा हमें सही **जीवन–सीध देने के लिए,** उन्होंने अपनी–अपनी **वाणी की रचना की।** इसके अतिरिक्त **आत्मिक प्रेरणा, मार्गदर्शन व सहायता प्रदान करने के** लिए, समय–समय पर, आत्मिक जीवन वाले गुरमुख जन, महापुरुष, साधू, सन्त भी, दुनिया में विचरण करते रहते हैं।

यह सारा बाहरमुखी **दिमागी धर्म प्रचार** का **सिलसिला**, केवल **मनमानी करने वाले, बेसुर, मनमुख व्यक्तियों के लिए ही रचा गया है, ताकि हम अहम् के भ्रम–भुलाव को अनुभव करके, अपने कर्ता ईश्वर के हुक्म रजाई के इलाही उपदेश का पालन** कर सकें।

हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि।।...
नानक हुक्मै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ।। (पृ. १)

ईश्वर ने मनुष्य को **विचारों की स्वतंत्रता** (freedom of thought) दी है। इसके द्वारा हम कुसंगति में फंस कर, ईश्वर से विमुख होकर, अपने कर्ता को "भूल" गए हैं। हमें पुनः "ईश्वर" की याद में लाने के लिए, गुरबाणी में **"मिलु साध संगति भजु केवल नाम"** का उपदेश दिया गया है। इस इलाही हुक्म का पालन करने के लिए, हमारे **आवारा, आज़ाद, बे–लगाम मन को–**

समझाने
जागृत करने
प्रेरित करने
उकसाने

रिझाने

परिवर्तित करने

के लिए बख्शे हुए गुरमुख जनों की **संगत व सेवा करने की आवश्यकता है –**

मनु असमझु **साधसंगि पतीआना।।**
डोलन ते चूका ठहराइआ।। (पृ. ८९०)

साधसंगति कै आसरै प्रभ **सिउ रंगु लाए।।** (पृ. ९६६)

मिलि संगति **सरधा ऊपजै** गुर सबदी हरि रसु चाखु।। (पृ ९९७)

सेई पिआरे मेल, **जिन्हा मिलिआ तेरा नाम चित आवै।।** (अरदास)

आवहु संत मिलहु मेरे भाई **मिलि हरि हरि नामु वखान।।** (पृ. १३३५)

कोटि करम करि देह न सोधा।।
साधसंगति महि मनु परबोधा।। (पृ. १२९८)

हम अपनी **आज़ादी, मनमर्जी** तथा **चतुराईयों, के कारण** ईश्वर से बिछुड़े हुए हैं। साध – संगत तथा सिमरन द्वारा, यदि कभी हमारे हृदय में – **थोड़ा सा कण मात्र,** पवित्र – पावन इलाही **चाव, उमाह, रीझ, तीव्र – इच्छा या श्रद्धा भावना** जागृत हो तब सतिगुरु अपने इलाही 'बिरद' द्वारा, अत्यंत कृपा व बख्शिश करते हैं और हम अत्यंत भाग्यवान बन जाते हैं। सच तो यह है कि आत्मिक –

रुचि
तीव्र इच्छा
आकर्षण
प्रीत
प्यार
प्रेम – डोरी
शब्द
नाम

की **इलाही बख्शिश –**

गुर प्रसादि है।
कृपा है।
कृपा – दृष्टि है।
प्रिम – प्याला है।
Grace है।

आपणा लाइआ पिरमु न लगई जे लोचै सभु कोइ।।
एहु पिरमु पिआला खसम का जै भावै तै देइ।। (पृ. १३७९)

आपे साजे आपे रंगे आपे नदरि करेइ।। (पृ ७२२)

जब कभी **साध संगत में सिमरन द्वारा "जीव"** इलाही **"प्रेम – डोरी"** का **झटका अनुभव करता** है, तो जीव की अन्तर – आत्मा में, अपनी **"इलाही – माँ", ईश्वर की याद, इन्तज़ार, आकर्षण, प्यार जागृत हो उठता है** और वह **इलाही "माँ की गोद" का स्नेहमयी प्रेम, रस, तथा शांति का आनंद उठाता है।**

जीव माया के भ्रम भुलाव में, **मायिकी दलदल** (marsh) में पलच – पलच कर, दुखदासी जीवन व्यतीत कर रहा है। **बावजूद,** इस दुखदासी जीवन के, जीव इसमें से **निकलने का प्रयास नहीं करता** क्योंकि उसे **ज्ञात ही नहीं,** कि कोई ऐसी अवस्था भी है, **जहां दुख है ही नहीं, सदा सुख और खैर ही है।** परन्तु यदि जीव को ऐसी **उच्च – पावन अवस्था का ज्ञान और निश्चय** हो जाए तो वह मायिकी नरक रूपी जीवन से दुखी होकर व तंग आकर इसमें से **निकलने की "लालसा" करता है** परन्तु फिर भी निकल नहीं पाता क्योंकि मायिकी पाँच विकारों की हठीली फौज का सामना करना जीव के लिए असम्भव है। इस प्रकार माया के दुखों से **तंग आकर, विवश होकर, वैराग्य में** जब जीव सच्चे दिल से अपने सतिगुरु के सम्मुख **"उपरि भुजा करि मै गुर पहि पुकारिआ...."** की **प्रार्थना** करता है, तो सतिगुरु तुरन्त अपने प्यारे बच्चे **"जीव"** पर असीम कृपा करके **"बाह पकड़ि प्रभि काढिआ, कीना अपनाइआ" की कला दिखा**

कर, जीव को माया की **दलदल** में से **निकाल कर,** अपने **इलाही अंक में समा लेता है।**

जिस प्रकार मां के हृदय में, अपने डूबे हुए या खोए हुए बच्चे के वापिस लौटने की अत्यन्त तीव्र इन्तज़ार होती है तथा उसे वापिस लाने का हर सम्भव प्रयास करती है। उसी प्रकार हम अपनी इलाही माता को भूल कर उससे बिछुड़े है। युग – युगांतरों से अकालपुरुष, गुरू, अवतारों द्वारा धर्म – प्रचार करवा के, अपने अंश – जीव के हृदय के द्वार पर दस्तक दे रहा है ताकि जीव अपने हृदय की श्रद्धा के किवाड़ खोले और अकालपुरुष दौड़ के अपने खोये हुए बच्चे को पुनः गने लगा ले।

दूसरे शब्दों में, साध – संगत द्वारा, जब कभी "जीव" अकालपुरुष को श्रद्धा – भावना से याद करके उसे मिलने की **थोड़ी सी इच्छा भी प्रकट करे, तो वह तत्काल अपने जीव को गले लगा लेता है।** इससे प्रत्यक्ष प्रकट होता है, कि हम तो कभी – कभी, क्षण मात्र उसे मिलने की इच्छा करते है, पर **ईश्वर तो युग – युगांतरों से अपने बच्चे को गले लगाने का हर सम्भव प्रयास करता रहता है।** चाहे हम इस **आत्मिक इच्छा, प्यार, आकर्षण, बख्शिश, गुर प्रसाद से अनभिज्ञ हैं।**

इस इलाही कामना – आकर्षण – प्यार **"प्रीत – डोरी" को ही "धर्म – प्रचार" कहा** जाता है।

हमारी **क्षण – मात्र** इच्छा, आकर्षण, प्यार की अपेक्षा ईश्वर की अपने अंश – **"जीव"** के लिए **"मां ममता" वाली इच्छा, प्यार का उछाल, प्रेम डोरी का आकर्षण, "करोड़ गुणा" अधिक, तीव्र तथा तीक्ष्ण है। इसे** ही इलाही "बिरद" कहा जाता है –

चरन सरन गुर एक पैंदा जाइ चल
सतिगुरु कोटि पैंडा आगे होए लेत है।।
एक बार सतिगुर मन्त्र सिमरन मात्र
सिमरन तांहि बांरबार गुरु हेत है। (वा. भा. गु. १११)

यह इलाही बिरद –

सदबरख्शिंद है।
सद मेहरबान है।
अवगुण को न चितारे है।
इलाही आकर्षण है।
प्रेम डोरी है।
प्रेम – प्याला है।
गुर प्रसाद है।
हुक्म है।
शब्द है।
नाम है।

यह बिरद –

1. चौरासी लारव योनियों में **"अन्तर्गत – लिखे" हुक्म** द्वारा, जीव के साथ, अनजाने ही **ओत – प्रोत परिपूर्ण है।**

2. मनुष्य योनि में जीव की "भूल" या "विमुखता" की दशा में, गुरू – अवतारों, गुरमुख प्यारों, महापुरुषों की **'संगत में प्रवृत्त है'।**

3. गुरबाणी, कीर्तन, कथा, **"साध – संगत" द्वारा प्रकट हो रहा है।**

4. **धर्म प्रचार** द्वारा **प्रकट हो रहा है।**

5. जब जीव को अपने कर्ता का ज्ञान हो जाए तो उसे ईश्वर से मिलाप की रुचि, आकॉक्षा, श्रद्धा, कांखी, भूख, प्यास लग जाती है तो सतिगुरु की **"नदर – करम"** (कृपा) द्वारा, अन्तर – आत्मा में आत्मिक ज्ञान का अनुभव, इलाही **रस – रंग तथा अन्य अनेक आश्चर्यजनक इलाही बख्शिशों में, इस "बिरद" का प्रदर्शन होता है।**

विद्युत का मात्र किताबी ज्ञान केवल **दिमाग का विषय है।** यह दिमागी ज्ञान **विद्युत का दामनिक निजी अनुभव** (personal experience of electric shock) **करवाने में असमर्थ है। इस निजी अनुभव के लिए बिजली की**

तार को छूना अनिवार्य है (contact with live electric wire)।

इसी प्रकार **"धर्म" का दिमागी ज्ञान** हमारी **धार्मिक जानकारी, उक्तियां, युक्तियां** (intricacies) **तो बढ़ा सकता है,** परन्तु यह ज्ञान –

उच्च, उत्तम, "आत्मिक" जीवन (Divine life)
"थरथराता" जीवन
"लरजराता" जीवन
"सिमरन" वाला जीवन
"प्रेम" वाला जीवन
"रस" वाला जीवन
"रंग" वाला जीवन
"शांति" वाला जीवन
"रुनझुन" वाला जीवन
"नाम खुमारी" वाला जीवन
"विस्मादमयी जीवन"
"अनहद धुन" वाला जीवन
इलाही "आह्लाद" वाला जीवन
"सहज समाधि" वाले जीवन

का **अनुभवी तजुरबा नहीं करवा सकता।**

यह अनुभवी आत्मिक तजुरबा (intutional Divine experience) बख्शे हुए गुरमुख जनों, महापुरुषों के **"सिमरन – जीवन" की आत्मिक व दामनिक "किरणों"** या "महक" (Divine magnetic vibrations and fragrance) द्वारा ही हो सकता है, जो उत्तम जिज्ञासु की अन्तर – आत्मा में अनजाने, गुप्त, स्वत ही: –

"संक्रमण" द्वारा (infection)
"छूह" द्वारा
"चिंगारी" द्वारा (spark)
"झंझोड़" कर (excite)
"जागृत" कर के (awaken)

"प्रेम – बाण" चला कर
"दीप से दीप" जला कर
"नदर – करम" द्वारा
"गुर प्रसाद" द्वारा

"मायिकी जीवन" को बदल कर, नया आत्मिक जीवन प्रदान कर देता है –

दीपक ते दीपकु परगासिआ त्रिभवण जोति दिखाई।। (पृ. ९०७)

जीअ दानु दे भगती लाइनि हरि सिउ लैनि मिलाए।। (पृ. ७४९)

इस प्रकार, आत्मिक मंडल में धर्म के प्रचार या विकास के लिए, ईश्वर ने, अपनी कृपा, बरिश्श, गुरप्रसाद द्वारा –

अटल
त्रुटिरहित
सदैवीय
अपरिवर्तनशील
अन्तर – आत्मिक
गुप्त
अदृश्य
अनसुने
भाषाहीन
सहज
मूक

"साधन" प्रयोग किये है।

नाउ नानक बखसीस मन माहि परोवणा।। (पृ. ५२३)

नानक नदरी पाईऐ कूडी कूडै ठीस।। (पृ. ७)

इस **अन्तर – आत्मिक धर्म प्रचार के लिए** किसी दिमागी –

मनघंडत – ज्ञान
गुटबंदी

दार्शनिकता
वाद–विवाद
कर्म–कांड
हठ–धर्म

की **आवश्यकता नहीं** क्योंकि यह **"इलाही बख्शिश"**–

"मोल न मुलीऐ"
"तोल न तुलीऐ"
"जोर न मंगण"
"देण न जोर" है
"जोर न सुरति गिआन वीचार" है।

एहु पिरमु पिआला खसम का जै भावै तै देइ।। (पृ. १३७८)

किसी महापुरुष ने **"सिमरन जीवन"** के विषय में यूं वर्णन किया है– "सतिगुरू की फकीरी **ढ़ाई अक्षरीय फकीरी** है तथा इस फकीरी–जीवन की आवश्यकताएं भी ढ़ाई अक्षरीय हैं, **सिमरन और ध्यान के दो अक्षर तथा आधा अक्षर "अलिप्त" रहने का** पढ़ना। आवश्यकताएं तीन–कुल्ली, जुल्ली, गुल्ली अर्थात एक घर, एक पहनने का वस्त्र और एक खाने को रोटी! इन तीन वस्तुओं के नाना प्रकार के रंग, फकीरों, सन्तों की अपनी–अपनी मौज तथा सुरति की खुशी अनुसार। हां जी, सतिगुरु जी ने **सिमरन का पहला कदम ही खमीर (जाग) के नियम पर रखा है, "सिमरन जीवन", "इलाही–जीवन" का दूसरा नाम है।"**

बिनु सिमरन जो जीवनु बलना सरप जैसे अरजारी।। (पृ. ७१२)

मैंने मन्त्र का रटन करते हुए कई लोगों को केवल **घास के ढेर की भाँति जलते हुए देखा है** इसलिए **फोकट और ज्योति से टूटा हुआ** रटन, **सिमरन नहीं है।** यह सिमरन नहीं करते, केवल नकल करते है। सिमरन तो सतिगुरु नानक जी का **बाणी रूप है।** जो सिमरन करता है, वह **सतिगुरु जी के "रूप" में जीता है।** हां जी! यह जीवन **खमीर के नियमों पर आधारित है तथा पलता है। गुरमुख सन्तों के सिमरन वाले जीवन का "टुकड़ा" यदि मिल जाए,**

उसका खमीर हमें लग जाए, तो हमारे अन्दर दम–बदम (श्वास–श्वास) "नाम", जारी हो जाता है। तभी हमारा जीवन "सिमरन वाला जीवन" बन सकता है।

सुणि सिखिऐ सादु न आइओ जिचरु गुरमुखि सबदि न लागै।। (पृ. ५९०)

गुरमुखि मारगु धंन है साधसंगति मिलि संगु चलाइआ।। (वा.भा.गु. ६/१६)

साधसंगति गुर सबदु पिआरा।। (वा.भा.गु. २९/२०)

आठों पहर नाम का जारी रहना, वह निरंतरता है, जिसकी चाह ऐमरसन (Emerson) ने प्रकट की थी। ऐमरसन निरन्तरता को ढूँढता है। उसे पता नहीं था कि **निरन्तरता सिमरन बिना** सम्भव नहीं। सतिगुरु जी के मार्ग में **इलाही जीवन की निरन्तर ज्योति, बिना सिमरन के प्रज्जवलित नहीं हो सकती।** सिमरन वाला जीवन, **दिव्य ज्योति से दम–बदम पिरोये सन्तों से प्राप्त हो सकता है,** हां जी! इस जीवन का निरंतर रहना, यह **सतिगुरु जी के अटल, दैवीय "बिरद" के नियम की पालना है।**

सिमरन वाले जीवन पर, **फरिश्तों तथा देवी–देवताओं का पहरा होता है।** सतिगुरु जी के घर की **महिमा, सिमरन से आरम्भ** हो गई। रूह धन गुरू, **धन गुरू का गीत गाती हुई, मिट्टी, हड्डी, मास** की चार–दीवारी से बाहर निकल खड़ी हुई।

हां जी! सिक्ख फकीर विंहगमी मार्ग पर चलने वाले लोग है। जब पंख निकल आते हैं, तो यह उस **आकाश में उड़ते हैं, जिनके प्रकाश से "कवि" जी के पंख जलने** लगते है। हां जी! **"सिमरन का जीवन", "खमीर का जीवन"** है। यह **"खमीर" "गुरसिक्खों से प्राप्त होता" है।** तभी तो "आइ मिलु गुरसिक्ख आइ मिलु" की प्रार्थना सतिगुरु जी ने सिखाई है। गुरसिक्खों, गुरमुखों द्वारा **खमीर दिये** बिना, "सिक्खी" नहीं मिल सकती। **अमृत छकाना इसी "गुप्त खमीर" की रास देना है तथा हां जी! सिक्ख की पहली जरूरत, सिमरन के "खमीर" वाला जीवन है।**

कली काल परगास करि गुरु चेला चेला गुरु संदा।।
गुरमुखि गाडी राहु चलंदा।। (वा.भा.गु. ४०/११)

ध्यान सिक्ख फकीरों का सरल है। "बै खरीदु किआ करे चतुराई इहु जीद पिंडु सभु थारे।।" हां जी! सिक्खों का ध्यान, **"प्रीत निरंकारी"** में **"नष्ट" हो जाने का नाम है।** हड्डी, मास, चमड़ी, मज्जा, रक्त, मन, बुद्धि, अहंकार तथा काम, क्रोध, लोभ, मोह, **इन सब को मोड़–मोड़ कर** (वश में करके) **सतिगुरू की प्रीत के रंग में रंगना, यही सिक्खों का "ध्यान"** है। **"जीवित मुर्दे" का नाम "सिक्ख"** है। सतिगुरू का **बै–खरीद** बनने का नाम ही **"सिक्ख"** है। भाई **"मंझ जी"** की **साखी** याद करो। **सिक्खी ध्यान "सतिगुरू जी का बन जाने" का नाम है** तथा **अखंडाकार प्रीतम सतिगुरू से न बिछुड़ना ही "ध्यान"** है। तीसरा यह कि जो सतिगुरू का **सिक्ख बना, जानो मालिक ने संसार से उसकी नाव के रस्से एकदम खोल दिए।** "न किसी का मीत, न किसी का भाई" **जैसा कोरा बनना जरूरी है। परन्तु अंदर से किसी सांसारिक प्राणी से प्रीत नहीं लगानी, न ही रिश्तों की रस्सियां कसनी है।** हां जी, **सिक्खी फकीरी बड़ी नाजुक "अवस्तु" है, जो अन्य वस्तुओं से "छुह" जाने से ही मैली हो जाती है।** सिक्ख फकीरों को संसार की भांति (अहम्ग्रस्त प्राणियों की भांति) **नेकी करने का बुखार कभी नहीं चड़ता। उनकी आंखें, प्रत्येक व्यक्ति के पीछे प्रभु को खड़े हुए देखती हैं** इसीलिए वह **अलिप्त हो जाते हैं।** यह एक **संकरी गली हैं, परन्तु ज्योति निरंकारी के अविचल–नगर को यही राह जाता है।**

वास्तव में यह **"अलिप्त–वर्ती" ही संसार का भला करने वाले हैं।** हां जी, यह दुनिया का भला करने **वाले अविचल नगर पहुंचे** और **वहां के वासी हो गए।** पर हां, उनके **नाम–निशान की,** जगत के इतिहासकारों को खबर नहीं। संसार में तो ऐरा–गैरा मुद्दई, तुम्मे वजीर बना बैठा है। परन्तु संसार का **असली भला करने वाले, गुफाओं से उठ कर सूली पर चढ़ गए तथा उनके शीश तलवार से उन लोगों ने उड़ाए, जिनका वह भला करने आए थे।** अब यह "अंधे–कुत्ते हिरन मगर" परोपकार करने भागे, जैसे **थूक से वड़े पक जाएंगे! लोग, सोसाईटी (भाईचारा) बनाने के यत्न में हैं, परन्तु सच तो यह है, कि जहां एक व्यक्ति को बनाने के लिए क्षण–क्षण, धुर दरगाह से संदेश आते हैं, घंटी–घड़ियाल बजते हैं, कई फरिश्ते, देवता छाया करते हैं, तब कहीं अनेक जन्मों पश्चात एक "रूह" तैयार होती है।** इसी कारण **सच के**

अभिलाषी सिमरन वाले दुनिया से **सदा अलिप्त रहते** हैं यथा –

साचि नामि मेरा मनु लागा।।
लोगन सिउ मेरा ठाठा बागा।।१।।
बाहरि सूतु सगल सिउ मउला।।
अलिपतु रहउ जैसे जल महि कउला।।१।।रहाउ।।
मुख की बात सगल सिउ करता।।
जीअ संगि प्रभु अपुना धरता।।२।।
दीसि आवत है बहुतु भीहाला।।
सगल चरन की इहु मनु राला।।३।।
नानक जनि गुरु पूरा पाइआ।।
अंतरि बाहरि एकु दिखाइआ।।४।। (पृ ३८४–५)

जिस गुरसिक्ख ने उपरोक्त ढ़ाई अक्षर पढ़ लिए, उसकी **सुरति एक विशेष अन्दाज़ में रहती है। अपने केंद्र से नीचे कभी नहीं उतरती। यदि कभी नीचे उतर आए तो अंग मुड़–मुड़ जाते हैं। रोग सा चिपक जाता है।**

जै तनि बाणी विसरि जाइ।। जिउ पका रोगी विललाइ।। (पृ. ६६१)

तथा सतिगुरु की बरिश्शश द्वारा, सतसंग द्वारा, उनके प्रेम द्वारा, श्री गुरु ग्रंथ साहिब के दर्शनों द्वारा, **तत्काल अपनी ऊंचाई पर जा पहुंचती है।** जिस प्रकार कवियों की सुरति कभी–कभी चढ़ती है, उसी प्रकार सन्तों की सुरति कभी–कभी ही अपने नियत स्तर से, जो बहुत ऊंचा है, नीचे उतरती है। **पर उस समय उनके लिए तो कयामत ही आ जाती है।** नाम रसिया के घड़ी–घड़ी के घड़ियाल है, डाँट फटकार लगाते–लगाते ही फूल बरसाने लगते हैं। फकीर का सिंहासन बादशाह और शेर के सिंहासन जैसा होता है, **बेनिआज़** होता है, **वह सदा नाम के नशे में रहता है। इस नशे की टोट नहीं।** यदि कोई फकीर से **"छुह" भी जाए, उसका भी भला हो जाता है,** जैसे चन्दन को छूते ही सुगन्ध आने लगती है।

वास्तविक "सिक्ख जीवन", "अविचली ज्योति" है। दुनिया इसके लिए तरस रही है। सतिगुरू कृपा करें, **हम दुनिया के धन्धों में न फंसें,** हां जी, दुनिया हमारे चरण धोए तथा हम **अविचली ज्योति की "मशालें" बन कर, सारे संसार को प्रकाश दें।**

सिक्खी धारण करनी कठिन अवश्य है, पर है वह वस्तु जिसे पाने के लिए सारा संसार तड़प रहा है, परन्तु यह मिलती नहीं। हमें दरगाह का पता है, हम **मूर्ख बालकों की भांति धर्मशाला छोड़, हरिमन्दिर को पीठ दिखा, दुनिया की ढलती प्रतिछाया की ओर दौड़ना दयानतदारी समझते हैं।**